International Journal of Advanced Academic Studies 2019; 1(2): 239-242

E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
IJAAS 2019; 1(2): 239-242
Received: 05-08-2019
Accepted: 10-09-2019

प्रशांत कुमार
बिजुली, सदर, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
प्रशांत कुमार
बिजुली, सदर, दरभंगा, बिहार, भारत

मेघदूत में निहित प्रेम तत्त्व की प्रासांगिता

प्रशांत कुमार

सारांश
स्थान और समय की सीमा से बहिर्गमन करने का एक पथ योग हैं, परन्तु उसका द्वितीय पथ प्रेम के अन्तःकरण से भी निकलता है। प्रेम की उदार स्थिति यह भी हैं, जो योग एवं समाधि से मिलती–जुलती है। योग की ही भांति देश और काल के क्षेत्र से बाहर निकल कर अतिशय आनन्द की सीमा में समाविष्ट कर देने की क्षमता नर–नारी के प्रेम में समाहित है।

प्रस्तावना
प्रेम में भूत से ऊपर उठकर भूतोरत्तर होने की शक्ति होती है। रूप के भीतर डूबकर अरूप का सन्धान करने की पवित्र प्रेरणा होती है। एकाकार होने का सबसे सहज, सबसे स्वाभाविक एवं मनमोहक तथा महनीय मार्ग है, लेकिन उदात्त हो जाने पर वह मानव को बहुत कुछ शीतलता प्रदान करता है, जो धर्म का अवदान (देन) है–

धर्मादर्थो अर्थतः कामः कामाद्धर्म–फलोदयः। [1]

अर्थात्, धर्म से अर्थ और अर्थ से काम की प्राप्ति होती है, परन्तु काम से पुनः हमें धर्म के ही फल प्राप्त होते हैं। धर्म का जन्म काम के धरातल पर होता है, पर सार्थकता उसकी तब होती है, जब वह ऊपर उठकर आत्मा के धरातल का स्पर्श करता है।

वस्तुतः यह शृंगार का विलास मात्र है। नदी जैसे स्वभावतः समुद्र की ओर दौड़ लगाती है और समुद्र नदी के साथ आलिंगन कर लेता है, उसी तरह वर्त्तमान समय में नारी भी महज शारीरिक आकर्षण से आकर्षित हो पुरूष की ओर प्रयाण करती चली रही है और पुरूष उसे आलिंगनबद्ध कर लेता है। आधुनिकता के नाम पर दोनों के बीच का प्रेम, प्रेम न रहकर वासना–मात्र रह गया है। प्रेम की शालीनता समाप्त हो गई है। अस्तु, वर्त्तमान समय के नवयुवक एवं नवयुवतियों को महाकवि कालिदास द्वारा उनके महाकाव्यों एवं नाटकों तथा गीतिकाव्यों में वर्णित प्रेम के आदर्श स्वरूप से बहुत कुछ सीखना आवश्यक है।

वास्तव में नारी नर को स्पर्श कर सन्तुष्ट नहीं होती और नर भी नारी के जो एक दूसरे को अलग रहने नहीं देता। जब दोनों आपस में मिल जाते हैं, तब दोनों के अन्तःकरण की शक्ति एक दूसरे को आकर्षित कर दोनों को आबद्ध किये रहती है। आगोचर एवं इन्द्रियातीत के रूप में नारी के अन्तःकरण में एक और नारी रहती है और इस नारी का साहचर्य पुरूष तब पाता है जब शरीर की अन्तर्धारा उछलकर शारीरिक चेतना से परे पवित्र प्रेम की दुरूह समाधि में पहुचकर निश्चेष्ट एवं निष्क्रिय हो जाती है। पुरूष के अन्तःकरण में भी एक और पुरूष रहता है, जो शरीर के धरातल से ऊपर उठा हुआ रहता है।

महाकवि कालिदास के दुष्यन्त ने शकुन्तला को प्रसंशा की दृष्टि से अवलोकन–विलोकन किया। तत्पश्चात् शकुन्तला के हाव–भाव बदल गए। उसके बोलने–चालने और अवलोकन करने में एक नवीन भंगीमा उत्पन्न हो गई। इसी तरह जब शकुन्तला ने दुष्यन्त को प्रसंशा–भरी दृष्टि से अवलोकन–विलोकन किया तो दुष्यन्त के अन्तःकरण में कविता जाग उठी। सही अर्थ में जीवन के सुख–आनन्द एवं उद्देश्य–रहित सुख के जितने भी इस झरने हैं, वे कहीं–न–कहीं काम के पर्वत से ही प्रस्फुटित होकर आनन्द का प्रादुर्भूत किये हैं। जिनका काम अवरूद्ध है, वे आनन्द के सूक्ष्म भागों से रिक्त रह जाते हैं।

दुष्यन्त और शकुन्तला का प्रेम केवल शरीर के धरातल पर ही नहीं रूकता वरन् वह शरीर से प्रादुर्भूत होकर एवं प्राण के गोपनीय लोक में प्रवेश करता है तथा रस के भौतिक धरातल से ऊपर उठकर रहस्य एवं आत्मा के अलौकिक अन्तरिक्ष में संचरण करता है। और, यह वर्त्तमान संदर्भ में नवयुवक एवं नवयुवतियों के मध्य उत्पन्न होने वाले प्रेम को उदात्त एवं आदर्शमय बनाने का सफल प्रयास करता है। वर्त्तमान समाज में सौन्दर्य की सत्ता एवं महत्ता तथा कालिदास की दृष्टि–वर्त्तमान भारतीय समाज भौतिक–सौन्दर्य की ओर सरपट भागता चला जा रहा है।

आधुनिक समाज में भौतिक सौन्दर्य की अत्यधिक महत्ता वर्त्तमान है। महाकवि कालिदास ने भी अपने काव्य एवं महाकाव्यों में मानव–जीवन के महत्त्वपूर्ण तत्त्व सौन्दर्य का सम्यक् विश्लेषण किया है। उनकी दृष्टि में प्रणय और सौन्दर्य का उपयोग किया जाना ही सार्थक है। 'युक्ताहार बिहार' सदा अभिनन्दनीय है। महाकवि कालिदास ने 'मेघदूत' नामक गीतिकाव्य में देश–काल एवं पात्र के अनुकूल मेघ के रूप–दर्शन एवं यक्ष–प्रिया के सौन्दर्य का विशद् विश्लेषण किया है। संसारिक भोगों के विविध को भोगता हुआ मेघ कैलास पर पहुंचकर भागवत् शिव के पदांक की परिक्रमा कर शिव–पार्वती के मणि–तट पर आरोहण के लिए सोपान बनकर अपने को धन्य कर लेता है। ऐहिक भोगों से होकर ही दिव्य आनन्द की उपलब्धि संभव भोग की विधियों में से होकर वह योग के शिखर पर समासीन होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पार्थिव आकर्षणों से गुजरती हुई जीवान्तमा अन्ततः भगवान शिव के आनन्दपुर में समाविष्ट हो जाती है। इस प्रसंग में चिन्तनों एवं भावों की बहुवर्णता एवं उनकी समतुल्य व्यंजना आवलोकन करने योग्य है।

मानव–जीवन में प्रायः सेक्स या सम्भोग भावना को जनमानस अश्लील मान लेता है। एतदर्थ शरीर के उन–उन भागों को वस्त्रों से आवेष्टित कर देता है, जिसके दर्शन एवं स्पर्शन से कामात्तेजन होता है। सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ–साथ अश्लीलता की भावना में भी परिवर्तन होता रहता है। वस्तुतः संभोग व्यापार अपने–आप में अश्लील नहीं होता। इसी के सहारे सृष्टि का कार्य संचलित होता है। तथास्तु, जीवन–सर्जक संभोग को सामान्य जन अश्लील मानते हैं। किसी मनौवैज्ञानिक ने कहा है कि 'यौन व्यापार संसार में सबसे सुखद प्रतीत होता है। तथापि, प्रतिक्रिया स्वरूप हम मानवों ने उसे घृणित एवं कुरूप कहना शुरू किया है। व्यक्ति के काम–सुख की पूर्ति में समाज बहुत तरह की बाधाएं उत्पन्न करता है, इसीलिए हमारे जीवन में काभ–भावना का अधिकाधिक अवदान होता रहता है।

यही कारण है कि उस अवदमित वासना की व्यक्त चर्चा को हम मानव अश्लीलता की संज्ञा प्रदान कर अपने अचेतन मन में उसे प्यार करते ही रहना चाहते हैं। अन्तःकरण से हम यौन को प्रिय मानते हुए भी बच्चों एवं गुरूजनों के पास इसकी चर्चा तक करना नहीं चाहते। समाज के बीच भी यौन–संबन्धों की चर्चा करने में हम कतराते तो अवश्य है, लेकिन हमो अन्तः में यौन–विषय अति प्रिय बनकर समाविष्ट रहता है। यौन मानव का अपरिहार्य अंग है, तथावस्तु बाहरी दृष्टि से उससे अलग रहने का बाहा स्वांग मानव करता रहता है। यही कारण है कि जिन उपन्यासों, कहानियों एवं नाटकों में सेक्स की जितनी ही अधिक खुलकर चर्चा रहती है, उसकी उतनी ही अधिक बिक्री होती है। उन उपन्यासों या कहानियों में वर्णित यौन विषयक चित्रणों को पढ़ने समय पाठकों की मानसिक दृष्टि काम–सुख का अनुभव करने लगती हैं। उदाहरण के लिए एक रूसी विद्वान् ने 'लोलिता' नामक उपन्यास में सेक्स का खुलकर वर्णन किया है। फलतः लोगों के बीच वह लोकप्रिय हो गया और उसकी काफी बिक्री हुई। हिन्दी–साहित्य के विशिष्ट कवि विद्यापति ने तो नवयुवती के स्तन को सोने का महादेव ही बना दिया है तथा उस पर हिलते हुए चिकुर जाल को भगवान् शिव पर झलने वाला चंवर कहा है। महाकवि कालिदास ने भी 'रघुवंश' में महारानी सुदक्षिण के स्तनों को कमल मानते हुए उस पर बैठे हुए भौंरों की शोभा का वर्णन किया है–

दिनेषु गच्छत्सु नितान्तपीवरं तदीयमानीलमुखं स्तनद्वयम्।
तिरश्चकार भ्रमराभिलीनयोः सुजातयोः पंकजकोशयोः श्रियम्।। [2]

महाकवि ने पार्वती के उरोज की श्याम मुखता का उल्लेख करते हुए लिखा है–

अन्योन्यम् उत्पीडयत् उत्पलाक्ष्याः स्तन द्वयं पाण्डु तथा प्रवृद्धम्।
मध्ये यथा श्याममुखस्यतस्य मृणाल सूत्रान्तरमप्यलभ्यम्।। [3]

महाकवि विद्यापति ने एक गीत के अन्तर्गत स्तनों के मध्य भाग को सोने के महाड़ों का सन्धि–स्थल घाषित किया है–

रूप लागत मन धावोल कुचकंचन गिरिसंधि।
ते अपराध मनोभवरे ततए धएल जानिबांधि।। [4]

रति व्यापार में यौवन जनित सुख का उत्स सन्निहित रहता है। महाकवि कालिदास की रचनाओं में इसका स्वरूप विशद् रूप में अवलोकन–विलोकन करने को मिलता है। उपाम यौवन के उत्कट विलास को चित्रित करने के लिए महाकवि ने नगर और गणिका के संभोग से उत्थित सुरभि का वर्णन बड़ा ही मनोहरी ढ़ंग से किया है। भारतीय समाज में रति क्रिया ऐकान्तिक व्यापार के रूप में गर्हित है। इसको एकान्त में देखने ओर करने वाले समाज में देखने और करने में सकुचते हैं।

सौन्दर्य में समाहित एंव प्रेम में प्रवृष्ट मनुष्य कदापि कठिन नहीं हो सकता–यह समाज का शाश्वत नियम है। महाकवि कालिदास ने अपने काव्य–महाकाव्यों में इस शाश्वत सामाजिक नियम को रूपायित किया है। महाकवि का राजा दुष्यन्त जब अपनी प्रेयसी शकुन्तला के मुख के पास मड़राते भौंरों को देखता है तो कहता है कि ओ रे! फूलों और लताओं के प्यारे अतिथि, इस मुंह पर मंडराने का कष्ट क्यों करता है? तेरे प्रेम की प्यासी भौंरी तेरे बिना मकरन्द नहीं पी रही है।–

अयि भो! कुसुमलताप्रियातिथे! किमत् परिपतनखेदमनुभवसि। [5]

भौंरें के नहीं मानने पर राजा उसे दण्ड भी अतिप्रिय एवं मधुर ढ़ंग से देते हैं। वे कहते हैं कि यदि तू ने मेरी प्रिया का अधर स्पर्श किया तो तुझे कमल के कोश में डाल कर बन्दी बना दूंगा।–

अक्लिष्ट वालतरू पल्लवलोभनीयं पीतं मया सदयमेव रतोत्सवेषु। [6]
बिम्बाधरं स्पृशासिचेद भ्रमरप्रियायास्त्वां कारियामि
कमलोदरबन्धनस्थम्।। [7]

इस तरह स्पष्ट है कि महाकवि कालिदास ने प्रेम के उन साथी स्वरूपों का वर्णन किया है, जिनका प्रदर्शन आज समाज में अवलोकन करने को मिलता है। रूपासक्ति के पश्चात् काम–भावना पर आधृत प्रेम को महाकवि ने सर्वत्र निन्दित एवं दण्डनीय रूप में चित्रित किया है। उनका प्रेम तो हृदय में अंकुरित होता है, जो दो आत्माओं को मिलन कराते हुए लोक–कल्याणार्थ सन्तानोत्पत्ति एवं पारलौकिक लक्ष्यों का संधान करता है। वासनात्मक प्रेम महाकवि को स्वीकार्य नहीं है। एतदर्थ उनका प्रेम–वर्णन अत्यधिक प्रासंगिक है।

कवि अपने युग का सच्चा प्रतिनिधि होता है और अपने जीवन की सच्ची अनुभूतियों को वह अपनी रमणीय रचनाओं में किसी न किसी रूप में अभिव्यक्त कर ही देता है, किन्तु उन्हें समझने और उनमें वर्णित स्थानों का अवलोकन करने के उपरान्त ही कवि के अन्तःकरण की वास्तविक बात समझ में आ पाती है। महाकवि कालिदास ने अपने गीतिकाव्यों में प्रेम के स्वरूप का बड़े ही मार्मिक ढ़ंग से वर्णन किया है।

वस्तुतः गीत व्यथा से व्यथित मानव के हृदय की सच्ची अनुभूति होता है। गीत कविता से अधिक भावोत्पादक और कम शब्दों में गीतकार अथवा गायक के अन्तः करण के अधिक भावों को अभिव्यक्त करता है। भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने एक स्वर से महाकवि कालिदास को गीतिकाव्यों का अद्वितीय उद्गाता

बताया है। संस्कृत काव्य की विविध विधाओं में काव्य–कानन–केसरी, कवि कुल–कुमुद–कलाधार महाकवि कालिदास का स्थान अन्यतम रहा है। महाकवि कालिदास एक ऐसे कलाकार रहे हैं।, जिनकी भावत्मिक एवं कलात्मिका शक्ति उनकी अद्‌भुत कवित्व शक्ति को प्रमाणित करने में सफल सिद्ध हुई है। महाकवि कालिदास की हृदय–रज्जिनी कविता की विशेषता का अवलोकन–विलोकन करके ही महाकवि बाण ने कहा है–

निर्गतासु ना वा कस्य कालिदास सूक्तिषु।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मज्जरीविष्व जायते।। [8]

महाकवि कालिदास अपनी कृतियों के कारण विश्व भर में विख्यात है; परन्तु उसके जीवन वृत्त के विषय में संस्कृत के विद्वानों में मतभेद् बना हुआ है। वह मतभेद् पूर्वाग्रह, संस्कृत के पाश्चात्य विद्वानों के कारण एवं कालिदास के ग्रन्थों में वर्णित एवं मेघदूत में मेघ को रामगिरि से हिमगिरि तक के मार्ग का अवलोकन नहीं कर सकने के कारण बना हुआ है। दुर्भाग्य का विषय यह भी बना हुआ है कि मेघदूत गीतिकाव्य पर अनेक टीकाओं के होने के बावजूद संस्कृत के विद्वानों ने महाकवि के अन्तःकरण के सच्चे भावों को समझने का प्रयास नहीं किया है। हिन्दी एवं संस्कृत भाषा में गीति काव्यों के अर्थ, महत्त्व एवं रहस्य को जानते हुए भी पूर्वाग्रह वशा महाकवि कालिदास के गीति काव्य मेघदूत के अनुस्यूत प्रेम–भाव को सही ढ़ंग से समझने का प्रयास नहीं किया गया है।

संस्कृत–साहित्य के गीति काव्यों में महाकवि कालिदास के 'मेघदूतम्' का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। वस्तुतः यह गीतिकाव्य एक समुज्ज्वल रत्न है जो अपनी मधुरिमा की अनुपम आभा से समस्त संस्कृत–साहित्य को प्रतिबिम्बित करता है। एक सौ इक्कीस श्लोक वाले इस लघु गीति–काव्य में महाकवि ने अपनी प्रखर प्रतिभा, मौलिक कल्पना, अद्‌भुत कवित्व शक्ति, सृष्टि निरीक्षण की पटुता, कला की मर्मज्ञता के साथ–साथ साहित्य–रचना कौशल का विशिष्ट परिचय दिया है। महाकवि ने अपने इस सुन्दर सुरम्य काव्य में मार्मिक विरह–व्यथा से युक्त एक विरही यक्ष की विरह जनित करूण कथा का जो सारगर्भिता चित्र खींचा है वह विश्व–साहित्य में अकेला है। अपने आप में बेजोड़ हैं। प्रणय–सन्देश की ऐसी पावनता–समन्वित सन्देश का अन्य कोई भी कवि चित्रण नहीं कर सका। वस्तुतः गीतिकाव्य के वास्तविक स्वरूप के कारण महाकवि कालिदास का मेघदूत प्रेम–व्यथा से व्यथित उनकी आपबीति एक सच्ची आत्मकथा है। सभी विद्वान् एक मत से यह स्वीकार करते हैं कि मेघदूत महाकवि कालिदास के प्रेम –विरह की दशा के उद्‌गार स्वरूप रचना है। गीतिकाव्य के लक्षण के अनुरूप मेघदूत में उज्जयिनी के प्रवासी जीवन का गान किया है। गम्भीरता से अध्ययन–मनन करने पर मेघदूत गीतिकाव्य, महाकवि द्वारा कुमारसंभव में शिव–पार्वती रति–सुख के वर्णन द्वारा दी गई शाप जनित प्रेम–दुख की सच्ची कथा है, जिसमें महाकवि ने किसी यक्ष का रूप जोड़कर अपने हृदय के सच्चे प्रेमिल भावों को मेघदूत के प्रथम श्लोक में ही अति कारूणिक रूप में अभिव्यक्त किया है–

कश्चित् कान्ता विरह गुरूणा स्वाधिकारात्प्रमतः
शोपेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।
यक्षश्चक्र जनकतलयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरूषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु।। [9]

महाकवि कालिदास का मेघदूत संस्कृत के गीतिकाव्यों का प्रारम्भिक स्वरूप है। इसमें अलकापुरी के अधीस्वर धनपति कुबेर के शाप से निर्वासित एक प्रेम–विरही यक्ष की मनोव्यथा का मार्मिक चित्रण है। वस्तुतः मेघदूत विशिष्ट प्रेमी महाकवि कालिदास की प्रेममयी अन्तः प्रकृति एवं बाहा प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण का विशिष्ट भण्डार है। यह संस्कृत का एक सुमधुर गीतिकाव्य है। प्रेम की ज्वाला में जलते हुए कवि कालिदास की यह काव्य–कृति, मानव के अन्तःकरण को द्रवीभूत कर देने वाली विरही यक्ष की वेदना भरी करूण कहानी से युक्त यह संस्कृत–साहित्य में ही नहीं वरन् विश्व–साहित्य में प्रेम–काव्य के रूप में अपना अनुपम स्थान स्थापित करता है। इसके काव्य–सौन्दर्य ने विश्व के समस्त साहित्यकारों का हृदय बरबस ही आकर्षित कर लिया है। इस काव्य के माध्यम से महाकवि ने एक विरही यक्ष का विरह–सन्देश मेघ के सहारे उसकी प्रियतमा के पास भेजा है, अलकापुरी में।

किसी अचेतन वस्तु को प्रेम–प्रसंग में दौत्य कर्म के लिए भेजना एंव प्रणय में गाढ़ उत्कंठातिरेक की सद्यः अभिव्यक्ति करना वास्तव में एक प्रतिभा–सम्पन्न कवि की मौलिक कल्पना है। इस गीति काव्य का नायक यक्ष जब अपनी प्रियतमा के पास अपने प्रीतियुक्त संदेशों को भेजना चाहता है और अनुकूल पवन को मन्द–मन्द गति से गमन करते हुए निर्मल नभ में बगुलियों को अलकापुरी की ओर गमन करते हुए देखता है, तो सहसा कल्पना की धारा में माधुर्य–युक्त पद–विन्यास स्वतः स्फुटित हो उठते हैं–

मन्दं–मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथात्वां
वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः।
गर्भाधानक्षणपरिचियान्नुनमाबद्धमालाः
सेविष्यन्ते नयन सुभगं खे भवन्तं बलाकाः।। [10]

संक्षेपतः मुक्तक साहित्य के समुज्ज्वल एवं रसमय रमणीय रत्न का पूर्व खण्ड (पूर्वमेघ) पावन प्रकृति के सलिल सौन्दर्य का रमणीय चित्र है, जिसमें मानवीय भावों का सजीव एवं सरस चित्रण बीच–बीच में किया गया है। 'मेघदूत' का उत्तर खण्ड (उत्तर मेघ) नैसर्गिक सौन्दर्य के शरीर में निहित मानव हृदय का भावपूर्ण चित्र है। कवि की कमनीय कल्पना की उच्ची उड़ान वहां पर विलासपूर्ण चित्रों में अपने रूचिर रूप में अभिव्यक्त हुई है। परन्तु उन सबमें पावन प्रकृति के शाश्वत सत्यों के अनुपम अुनभव की गहरी छाप है। कवि की कमनीय कल्पना का आधार मानव एंव प्रकृति जगत् में, नगरों और वनों में तथा आकाश एवं पृथ्वी पर सर्वत्र ही सूक्ष्म निरीक्षण द्वारा संकलित प्रचुर सामग्री हैं। प्रकृति के सभी रूप विशालतम् पर्वत से लघुतम पुष्प तक–मानव एवं देवताओं के समान ही व्यक्तित्व की अनुभूति और जीवन से युक्त है–

अपारे काव्य संसारे कविरेको प्रजापतिः।
यथास्मै रोचते विश्वं तथैव परिवर्तते।।

अर्थात् कवि स्वयं प्रजापति होता है। वह अपनी कल्पनामयी दृष्टि के अनुसार अपनी नव नूतन रमणीय निराली सौम्य सृष्टि की रचना करता है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत के अन्तर्गत अपनी अनूठी कल्पना का चारूमय चमत्कार दिखाकर नूतन, अद्‌भूत् और मर्मस्पर्शी कथा का निमार्ण कर संसार के समक्ष एक अलौकिक वियोग–व्यवस्था की करूण–कथा की दृष्टि के सहारे सहृदयों के हृदय में एक विचित्र आतुरता और उत्कण्ठा कर दिया है।

महाकवि कालिदास के इस गीतिकाव्य मेघदूत के अन्तर्गत कवि के भाव भरे वचनों में हजारों वर्षो का सत्य, शाश्वत प्रेम, विधाता के विधान की अटलता, कमनीय कल्पना, कोमलकान्त पदावली, भावों की सुकुमारता, रसानुकूल–भावाभिव्यंजना, विचारों की उदारता आदि गुणों से समन्वित गीति कला का चूड़ान्त निदर्शन है। महाकवि कालिदास की अलौकिक एवं मौलिक कल्पना के

उन्नत शिखर पर स्थित मेघदूत का स्थान अतिमहत्त्वपूर्ण है।

गीति काव्य ही प्रेम भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है

गीतिकाव्य ही प्रेम–तीर से घायल दुःखी व्यक्ति के हृदय के सच्चे भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम होता है। इसमें किसी पात्र विशेष को आगे करके, उसे मुख्य पात्र बनकार किसी घटना विशेष से जोड़कर अन्तःकरण के प्रेमोद्गार व्यक्त किया जाता हैं। महाकवि कालिदास ने भी अपने अन्तःकरण के विरह–विदग्ध विचार–भाव को यक्ष के माध्यम से मन्दाक्रान्ता छन्द में वर्णित किया है।

निष्कर्ष

वस्तुतः गीतिकाव्य ही कवियों के प्रेम–भाव को व्यक्त करने का सच्चा एवं समुचित माध्मय है। गीति काव्यों में विरह–वेदना की व्यथा–कथा समाहित रहती है। विरह–वेदना से विगलित आंसुओं का हार ही उपहार में प्राप्त होता है। 'मेघदूतम्' नामक गीति काव्य भी यक्ष के माध्यम से पत्नी–विरही महाकवि कालिदास की अन्तर्ज्वाला से परिपक्व प्राणों का स्वर गुंजन स्वरूप है। उनके अन्तःकरण का प्रमी यक्ष के माध्यम से अपनी व्यथा प्रस्तुत करता हुआ दीख पड़ता है। महाकवि का अन्तर्दहन शान्त रहते हुए भी तीव्र है।

संदर्भ

1. अभिज्ञानशाकुन्लतम्, गजेन्द्रगद्कर, सम्पादितम्, दि पॉपुलर बुक स्टोर, सूरत, 1976
2. अभिज्ञानशाकुन्लतम्,–व्याख्याकार–श्रीकृष्णमित्र त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वराणसी, सन् 1911
3. अथर्ववेद का सुबोध भाष्य, भाग 1–4, पं. श्रीपाद् दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, जिला–बलसाड, तृतीय संस्करण, 1989
4. अथर्ववेद, अंग्रजी अनुवाद, अनु. ह्विटने, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
5. अशोक के फूल– डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1987
6. ऋग्वेद, सं. एक मैक्समूलर, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, कलकत्ता, 1982
7. ऋतुसंहारम्–कालिदास सं. शिव प्रसादन द्विवेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2004
8. कथासरित्सागर–जगदीश लाल शास्त्री, सम्पादित, मोतीलाल बनारसीदास, वनारस, 1977
9. काव्यमीमांस, राजशेखर, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना, 1954
10. काव्यलंकारसूत्र, एन.एन. कुलकर्णी, सम्पादित मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1954